नजरों निमख न छूटहीं, तो नाहीं लागत पल।
अंदर तो न्यारा नहीं, पर जाए न दाह बिना मिल।। १० ।।

उसकी नजर पिया से नहीं छूटती, इसलिए पलक नहीं लगाती। विरहिणी को प्रीतम अन्दर से मिले होते हैं, परन्तु जब तक बाहर से न मिलें तब तक विरह की अग्नि बुझती नहीं।

जो दुख तुमहीं विछुरे, मोहे लाग्यो जो तासों प्यार।
एता सुख तेरे विरह में, तो कौन सुख होसी विहार।। ११ ।।

हे धनी! आपके बिछुड़ने से मुझे विरह का जो दुःख हुआ है, वह मुझे बहुत प्यारा हो गया है, क्योंकि आप मेरे चित्त से हटते ही नहीं। इतना सुख जब आपके विरह में है तो आपके मिलन में कितना सुख होगा।

॥ प्रकरण ॥ ७ ॥ चौपाई ॥ १४८ ॥

राग श्री धना काफी

सनमंध मूल को, मैं तो पाव पल छोड़्यो न जाए।
अब छल बल मोहे कहा करे, मोह आद थें दियो उड़ाए।। १ ।।

हे धनी! मेरा और आपका सम्बन्ध परमधाम का है। ऐसा जानकर अब चौथाई पल के लिए भी छोड़ा नहीं जाता। आपने मेरी अज्ञानता की नींद (मोह) आदि (जड़) से उड़ा दी है। अब यह माया की ताकत मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती।

दरद जो तेरे दुलहा, कर डारयो सब नास।
पर आस न छोड़े जीव को, करने तुम विलास।। २ ।।

हे मेरे धनी! आपके इस विरह के दर्द ने मेरा सब कुछ नष्ट कर दिया, परन्तु मेरे जीव को आपके साथ मिलकर आनन्द करने की आशा लगी है।

विरहा न छोड़े जीव को, जीव आस भी पिउ मिलन।
पिया संग इन अंगे करूं, तो मैं सुहागिन।। ३ ।।

यह आपके बिछुड़ने का विरह मेरे जीव को छोड़ नहीं रहा और जीव को भी आपसे मिलने की आशा लगी है। मैं इस तन से आपसे मिलूं तभी मैं सुहागिनी कहलाऊंगी।

लागी लड़ाई आप में, एक विरहा दूजी आस।
ए भी विरहा पिउ का, आस भी पिउ विलास।। ४ ।।

मेरे अन्दर एक आपके बिछुड़ने का विरह और दूसरा आपसे मिलने की आशा—इन दोनों की आपस में लड़ाई होने लगी है। विरह भी आपका है और आपसे मिलकर विलास की चाह भी आपकी है।

मैं कहावत हों सुहागनी, जो विरहा न देऊं जिउ।
तो पीछे वतन जाए के, क्यों देखाऊं मुख पिउ।। ५ ।।

मैं सुहागिनी अंगना कहलाती हूं। आपके वियोग में यदि न तड़पूं तो पीछे घर में जाकर मुख कैसे दिखाऊंगी ?

Nijanand App

जो जीव देते सकुचों, तो क्यों रहे मेरा धरम।
विरहा आगे कहा जीव, ए केहेत लगत मोहे सरम।।६।।

ऐसी हालत में यदि मैं अपने जीव को कुर्बान करने में संकोच करूं तो मेरा धर्म कैसे रहेगा? विरह की आग के सामने जीव हैं ही क्या? ऐसा कहने में मुझे शर्म लगती है।

माया काया जीवसों, भान भून टूक कर।
विरहा तेरा जिन दिसा, मैं वारूं तिन दिस पर।।७।।

माया, शरीर और जीव के टुकड़े कर तथा भूनकर आपकी उस दिशा पर कुर्बान कर दूं, जिस दिशा से मुझे आपका विरह मिला है।

जब आह सूकी अंग में, स्वांस भी छोड्यो संग।
तब तुम परदा टालके, दियो मोहे अपनो अंग।।८।।

जब मेरे अंग से 'हाय धनी' की रट खत्म हो गई और सांस ने भी साथ छोड़ दिया, तब आपने मेरे शरीर का तामस हटाकर (शरीर का कष्ट हटाकर) मुझे स्वीकार किया और सनन्ध वाणी दी।

मैं तो अपना दे रही, पर तुम ही राख्यो जिउ।
बल दे आप खड़ी करी, कारज अपने पिउ।।९।।

मैंने तो निराशा में ही अपने आप को खत्म कर दिया था। आपने ही मुझे जीवित रखा। आपने अपने काम के लिए (ब्रह्मसृष्टि को घर ले जाने का काम) ही अपनी ताकत देकर फिर से खड़ा कर दिया।

जीवरा भी मेरा रख्या, तुम कारज भी कारन।
आस भी पूरी सुहागनी, और व्रध भी राख्यो विरहिन।।१०।।

हे धनी! आपने अपने काम के लिए मुझे जीवित किया। मेरी चाहना भी पूरी की और मेरी लाज भी रखी।

तुम आए सब आइया, दुख गया सब दूर।
कहे महामती ए सुख क्यों कहूं, जो उदया मूल अंकूर।।११।।

हे धनी! अब आप आ गये तो मेरे विरह के सब दुःख भूल गए। सब कुछ मिल गया। इन सुखों का वर्णन कैसे करूं? मुझे तो ऐसा लगा जैसे परमधाम में आपके साथ रहते थे वैसे ही यहां हूं।

॥ प्रकरण ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ १५९ ॥

विरह को प्रकास–राग आसावरी

एह बात मैं तो कहूं, जो कहने की होए।
पर ए खसमें रीझ के, दया करी अति मोहे।।१।।

हे धनी! मुझे इतनी खुशी हो गई है कि मैं कह भी नहीं सकती। यह तो मुझे मेरे पिया श्री राजजी महाराज ने खुश होकर मुझ पर दया की है।

सुनियो बानी सुहागनी, दीदार दिया पिउ जब।
अंदर परदा उड़ गया, हुआ उजाला सब।।२।।

हे मेरे मोमिनो! मेरी बात को सुनो। मेरी निराश हालत में जब श्री राजजी महाराज ने दर्शन दिया तो अन्दर का परदा (विरहा का परदा) उड़ गया और सब रोशनी हो गई।

Nijanand App